शोध मंथन Vol. XII No.II April-June 2021 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

भारत में अध्यापक शिक्षा का विकास एवं अध्यापक–शिक्षा पाठ्यक्रम निर्धारण के लिए कुछ सुझाव

प्राप्तिः 26.05.2021
स्वीकृतः 15.06.2021

डॉ०सुमन शर्मा (सह–आचार्य)
इन्सटीट्यूट ऑफ टीचर ऐजूकेशन
कादराबाद, मोदीनगर (गाजियाबाद)
ईमेलः *sumansharmaite@gmail.com*

सारांश

भारत में शिक्षा कहीं किसी अन्य देश, राष्ट्र या ग्रह से आयापित नहीं हुई है। भारत में जितना पुराना सभ्यता तथा संस्कृति का इतिहास है, इतना ही पुराना है शिक्षा का इतिहास। भारत ऐतिहासिक रूप से ही शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी रहा है। शिक्षा की जड़े यहाँ इतनी गहरी हैं कि लोक मानस जब किसी उक्ति या कहावत को उद्धत करता है तो जीवन का अनुभव सभी शैक्षिक प्रक्रियाओं को जीवन्त कर देता है। शिक्षा ने मनुष्य की जन्मजात मूल प्रवृतियों को शोधित किया और उसमें विवेक उत्पन्न कर अन्वेषण की प्रवृति पैदा की। अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अपनी प्राचीन व नवीन विचार धाराओं में समन्वय स्थापित कर एक ऐसी शिक्षा प्रणाली का सजृन करें जिसकी आत्मा भारतीय है, किन्तु दृष्टिकोण प्रगतिशील तथा वैज्ञानिक हो। शिक्षा प्रकिया के तीन प्रमुख अंगो अध्यापक, छात्र व पाठ्यक्रम अध्यापक का सर्वाधिक स्थान महत्वपूर्ण है शिक्षा व्यवस्था किसी भी प्रकार की क्यों न हो, उसमें अध्यापक की भूमिका सर्वोपरि होती है।

भारत में शिक्षा का इतिहास अति प्राचीन है। विभिन्न कालों में शिक्षा के उद्देश्यों, शिक्षा पद्धतियों एवं प्रक्रियाओं में परिवर्तन भी होते रहे है। इस ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि में अध्यापक शिक्षा के आदर्श पाठ्यक्रम के निर्धारण में किन आदर्शो और मुल्यों को अपनाना चाहिए इस लेख का उद्देश्य उन्हीं को स्पष्ट करने का है। अध्यापक शिक्षा का महत्व स्वयं सिद्ध है क्योंकि शिक्षा राष्ट्र और समाज के विकास के लिए एक आवश्यक और अनिवार्य तत्व है। शिक्षक की गुणवत्ता ही शिक्षा की गुणवत्ता निर्धारित करती हैं। डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन के अनुसार'', समाज में अध्यापक का स्थान अतयन्त महत्वपूर्ण है। वह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को बौद्धिक परम्पराओं व तकनीकी कौशलों के हस्तान्तरण के साधन के रूप में तथा सभ्यता की ज्योति को प्रज्ज्वलित रखने में सहायता प्रदान करता है।'' कोठरी आयोग (1964–66) ने अपने प्रतिवेदन, शिक्षा तथा राष्ट्रीय विकास'' में स्पष्ट किया है कि शिक्षा के स्तर तथा राष्ट्रीय विकास में शिक्षा के योगदान को जितना भी बातें प्रभावित करती हैं उनमें अध्यापक के गुण, क्षमता व चरित्र सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं।

हमारा वर्तमान समाज व राष्ट्र परिवर्तन व विकास के एक नाजुक परन्तु अत्यन्त महत्वपूर्ण दौर से गुजर रहा है। ऐसी परिस्थिति में अध्यापक का उत्तरदायित्व और भी अधिक बढ़ जाता है। सामाजिक तथा राष्ट्रीय विकास का सूत्रधार अध्यापक ही होता है। समाज की आवश्यकताओं, अपेक्षओं, आकाक्षाँओं, आदर्शो, मूल्यो आदि आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर विभिन्न क्षेत्रों के लिए

सृजनशील नेतृत्व (creative leadership) को विकसित करना तथा समानता, स्वायतता व न्याय (Equality Freedom and Jujstice) पर आधारित नवीन सामाजिक व्यवस्था को स्थापित करने का लक्ष्य प्राप्त करने में सहायता प्रदान करना भी अध्यापक समुदाय का उत्तरदायित्व है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्वः–

एक अच्छे अध्यापक के लिए न केवल कक्षा शिक्षण में प्रवीण होना आवश्यक है वरन् उसे अध्यापक के रूप में अन्य अनेकों दायित्वों का पालन भी करना होता है। भारत में गुरूकुल प्रणाली में आचार्यों को सर्वोपरी स्थान प्राप्त था। आधुनिक काल में शिक्षा के पश्चिमीकरण और लोकतनत्रीकरण के बाद विधालयों, महाविधालयों और विश्वविधालयों की स्थापना हुई। यद्दपि माँ बच्चे की प्रथम गुरू होती है तथापि जहाँ तक औपचारिक शिक्षा का प्रश्न हैं उसके लिए तो ऐसे गुणवान व्यक्तियों की आवश्यकता होती हैं जो बच्चों को संस्कारी, सच्चारित्र और सुयोग्य बना सकें। शिक्षा का अन्तिम लक्ष्य बच्चे को एक बहुत ही अच्छा और बेहतरीन इन्सान में बदलना है। यदि किसी देश के बच्चे सुखी, सन्तुष्ट और सम्पन्न हैं वह देश भी सुखी सन्तुष्ट और सम्पन्नकहलाता है। भारतीय मूल्यों की दृष्टि से देखें तो शिक्षा का चरम उद्देश्य चर्तुवर्ग (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) का सन्तुलन समन्वय है। सच्ची शिक्षा बच्चों के अन्तः चक्षुओं को खोलती है और उसे अन्धकार से स्थायी प्रकाश की ओर ले जाती है। इस कार्य को उत्तम और गुणशील शिक्षकों के अतिरिक्त और कोई नहीं कर सकता।

शिक्षा को बालकेन्द्रित मानने के कारण यह आवश्यक हैं कि अध्यापक पाठ्यवस्तु के साथ–साथ बालकों की प्रकृति को भी अच्छी तरह से समझे। विभिन्न आयु वर्गो के बालकों में विकास व वृद्धि किस प्रकार से होती है, बालकों की आवश्यकताएँ क्या है, बालक किस प्रकार से सीखते हैं, बालकों को सीखने के लिए प्रोत्साहित कैसें किया जा सकता है, बालकों में वांछित अनिवृत्ति व मूल्य कैसे विकसित किए जा सकते हैं, एक शिक्षक व प्रशिक्षित अध्यापक इन प्रश्नों का उत्तर खोलकर बालक के विकास को सरलता व सुगमता तथा द्रुत गति से सम्भंव बना सकता है इस दृष्टि से उनकी शिक्षा और प्रशिक्षण की उपयोगिता और महत्व र्निविवाद है।

अध्ययन के उद्देश्य एवं लक्ष्यः–

योग्यता से अभिप्राय निष्पत्ति का वह स्तर है जो किसी परिक्षण की कसौटी पर खरा उतरता है। शिक्षक शिक्षा के अर्न्तगत वे सभी पक्ष आ जाते हैं जिनसे व्यक्ति में ज्ञान तथा कौशल का विकास होता है। वे सभी क्रियाएँ जिनके माध्यम से भावी शिक्षकों का निर्माण होता है, वे सैद्धानितक तथा व्यवहारिक रूप से व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन करते हैं। शिक्षक शिक्षा, भावी शिक्षकों में रूचि, अभिरूचि तथा कौशलों का विकास करते हैं। शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को कुछ योग्यताओं व कौशल का परिचय करना मात्र नहीं है, बल्कि उनमें शिक्षण के प्रति रूचि के विकास के साथ–साथ भी उनके व्यक्तिव का विकास सर्वाड्गविकास भी करना जरूरी है। रूचि अभिरूचि के कारण शिक्षक नए ज्ञान तथा कौशल के प्रति सचेत रहता है। इन सभी बातों का ध्यान रखते हुए अध्यापक शिक्षा के पाठ्यक्रम निर्धारण के निम्न उद्देश्य हैः–

1. शिक्षक–शिक्षार्थी को शिक्षा की दार्शनिक, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि से अवगत कराना।
2. राष्ट्रीय विकास में शिक्षक–शिक्षर्थी को शिक्षा की भूमिका के महत्व को प्रतिपादित करना।

3. शिक्षक–शिक्षार्थी का वैज्ञानिक और तकनीकी साक्षरता के आधारभूत तथ्यों के साथ समन्वय स्थपित करना।
4. शिक्षक–शिक्षार्थी में सामाजिक यर्थात के प्रति आलोचनात्मक सजगता विकसित करना।
5. निर्धारित कार्यों को सम्पन्न करने के लिए छात्राध्यापकों को दक्ष और प्रतिबद्ध उद्यमी के रूप में विकसित करना।
6. शिक्षक–शिक्षार्थी में प्रबन्धन तथा व्यवस्थापना कौशल आदि को विकसित करना।
7. शिक्षक–शिक्षार्थी में पाठ्य–सहगामी क्रियाओं के आयोजन की योग्यता विकसित करना।
8. शिक्षक–शिक्षार्थी में शाश्वत मानवीय मूल्यों तथा सांस्कृतिक परम्पराओं को स्थायित्व प्रदान करना।

अध्ययन का परिसीमनः–

प्रस्तुत लेख में ऐतिहासिक काल (प्राचीनकाल, बोद्धकाल और मध्यकाल) आधुनिककाल या अर्वाचीन काल (ब्रिटिशकाल, स्वार्तन्योतर काल) में शिक्षण व्यवस्था की गत्यात्मकता और वर्तमान में अध्यापक शिक्षा की रूपरेखा तक ही सीमित रखा गया है।

भारत में अध्यापक शिक्षा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमिः–

अध्यापकों को सभी आदर्शों का जनक माना जाता था। इसलिए जहाँ एक और अध्यापक को ज्ञान के किसी एक विशिष्ट क्षेत्र अथवा अनेकों क्षेत्रों में निपुणतम होने की अपेक्षा की जाती थी, वहीं दूसरी और उसे अत्यन्त उच्च नैतिक चरित्र का स्वामी भी माना जाता था। ऋग्वेद में चर्चा मिलती है कि उस समय का अध्यापक बौद्धिक रूझान व श्रेष्ठ बुद्धि से युक्त, अपने विषय में निपुणता प्राप्ति के प्रति समर्पित, सद–आचरण करने वाला, ब्रह्मचर्य का पालक तथा सर्वोच्च सत्ता के ज्ञान के प्रति लालायित रहता था। उस समय के अध्यापक के लिए किसी भी प्रकार के औपचारिक प्रशिक्षण की व्यवस्था नहीं होती थी तथा न ही अध्यापक बनने वाले को किसी औपचारिक प्रमाण–पत्र देने की प्रथा थी। अच्छे अध्यापकों के सम्पर्क में रहकर छात्र अध्यापक कला का अनौपचारिक ढंग से व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त कर लेते थे तथा अपने अनुभवों के आधार पर स्वतन्त्र रूप से अध्यापन कार्य प्रारम्भ कर देते थे। वैदिक काल के अन्तिम चरण में अध्यापन व्यवसाय पैतृक कार्य बनने लगा था तथा उसके बाद वंश परम्परागत व्यवसाय के रूप में अनेक सदियों तक ब्राह्मण समुदाय अध्यापन कार्य को करता रहा है। वैदिक काल में शिष्य को पुत्र के ही समकक्ष माना जाता था और यदि योग्यतम शिष्या, पुत्र के स्थान पर दूसरा कोई होता था तो गुरू का कर्त्तव्य होता था कि वह उस पर विशेष ध्यान देते हुए सम्पूर्ण ज्ञान उसे प्रदान करें। शायद इसी परम्परा के अनुसार ही गुरू द्रोणाचार्य ने अपने पुत्र अश्वथामा के स्थान पर योग्यतर शिष्य अर्जुन को श्रेष्ठ धर्नुधर बनाने के लिए संकल्प लिया था। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि इस काल में शिक्षक प्रशिक्षण की कोई औपचारिक व्यवस्था नहीं थी।

बौद्ध काल में यह धारणा बनी कि शिक्षण का व्यवसाय केवल ब्राह्मणों की ही धरोहर नहीं है वह हर जागरूक तथा प्रबद्ध व्यक्ति जिसकी शिक्षण में रूचि है, चाहें वह किसी भी वर्ण अथवा जाति का हो, बिना किसी भेदभाव के अध्यापन का अधिकारी है। सर्वप्रथम औपचारिक रूप से धार्मिक शिक्षा के लिए ही शिक्षकीय प्रशिक्षण की व्यवस्था इस कालावधि में की गई। नैतिकता और अनुशासन पूर्ण आचरण को अनिवार्य बनाया गया। यह शिक्षा बुद्ध की धर्म शिक्षा के प्रचार और प्रसार के लिए शिक्षकों

को प्रशिक्षित करने कि लिए दी गयी, न कि विद्यालयों के शिक्षकों के लिए। ये प्रशिक्षण भिक्षओं की विधि एक विशेष प्रकार की व्यवस्था पर आधारित थी जो कि बाद में पहचानी गई और उसको मोनीटोरियल व्यवस्था कहा गया। इस तरह से अध्यापक–शिक्षक की औपचारिक व्यवस्था सामने आई और इस प्रकार शिक्षण के अच्छे व्यवसाय के रूप में समझा गया, जो आज भी वर्तमान में है।

मुस्लिम काल में अध्यापक शिक्षा की कोई औपचारिक व्यवस्था नहीं थी। शिक्षा एक जनकार्य बन गयी। अध्यापक शिक्षा की किसी प्रणाली के अस्तित्व के बारे में विशेष प्रमाण इस काल में नही मिलने के साथ अरबी भाषा के शिक्षण के साथ मदरसों में शिक्षा देने के लिए इस्लाम धर्म के अनुयायियों की नियुक्ति मौलवियों के पद पर की जाती थी। देश में उपयुक्त विद्वान के उपलब्ध न होने पर अरब देशों से भी मौलवियों को बुलाया जाता था जिन्हें समाज में प्रतिष्ठा और पर्याप्त सम्मान प्राप्त होता था।

ब्रिटिशकाल में अध्यापन एक वृत्ति (Profession) के रूप में विकसित होने लगा था। शिक्षा के प्रसार के साथ सुयोग्य अध्यापकों की माँग बढ़ने लगी तथा अध्यापन कार्य में संलग्न व्यक्तिों के प्रशिक्षण की आवश्यकता प्रतीत होने लगी। डेनिश मिशनरियों ने सर्वप्रथम श्रीरामपुर (पश्चिम बंगाल) में प्राईवेट तौर पर ट्रेनिंग स्कूल प्रारम्भ किया। इसके पश्चात मद्रास, बम्बई तथा कलकत्ता में नार्मल स्कूल खोलें गए। फिर सरकार ने भी शिक्षक प्रशिक्षण में रूचि दिखाई। पूना, सूरत, कलकत्ता, आगरा, मेरठ, वाराणसी में नार्मल स्कूल खोलें गये। 1824 ई० में इन ट्रेनिंग स्कूलों की संख्या 26 हो गयी थी 1826 में थामस मुनरो ने सर्वप्रथम शिक्षण प्रशिक्षण पाठ्यक्रम का नियोजन किया। 1854 में वुड के घोषणा–पत्र के साथ ही ब्रिटिश सरकार के द्वारा अध्यापिका प्रशिक्षण की दिशा में ठोस और सार्थक प्रयत्न प्रारम्भ हुए। 1882 तक भारत में कुल 106 प्रार्थमिक अध्यापक शिक्षण केन्द्र तथा मद्रास व लाहौर में स्थित दो माध्यमिक अध्यापक प्रशिक्षण केन्द्र थे। 19 वीं सदी के अन्त तक मद्रास, राजमुन्दरी, गुरूकुल, जबलपुर तथा इलाहाबाद में माध्यमिक स्तर के शिक्षण प्रशिक्षण संस्थान थे। 1912 में सरकार ने कहा, ''कोई भी व्यक्ति स्कूलों में पढ़ाने के लिए उस समय तक योग्य नहीं माना जायेगा जब तक कि वह शिक्षण का प्रमाण–पत्र प्राप्त नहीं कर लेता।'' सन् 1929 में हर्टाग समिति ने प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण पर अधिक बल देने, प्रशिक्षण की अवधि बढ़ाने, अध्यापकों के लिए अभिनव पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने तथा अध्यापकों की सेवा शर्तो को सुधरने के लिए सुझाव दिये। सन् 1937 में वुड–एबट प्रतिवेदन तथा सन् 1944 में सार्जेन्ट रिपोर्ट में भी अध्यापक प्रशिक्षण के सम्बन्ध में अनेक सुझाव दिये गए।

स्वतन्त्रता से पूर्व प्रशिक्षण संस्थायें 1947 में हमारे देश में 649 सैकेण्डी प्रशिक्षण विद्यालय व 15 प्रशिक्षण महाविद्यालय थे। राधाकृष्णन आयोग ने कहा कि एम० एड० के अध्ययन हेतु केवल उन्हीं व्यक्तियों को प्रोत्साहित किया जाए जिन्हे 6 वर्ष का शिक्षण अनुभव हो। प्रशिक्षण संस्थाओं में पाठ्यक्रम नगरीय एवं स्थानीय वातावरण के अनुकूल बनाया जाये। माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार प्रशिक्षण महाविद्यालय दो प्रकार के होने चाहिएः 1. माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों हेतू इनकी प्रशिक्षण अवधि 2 वर्ष की होनी चाहिए। 2. स्नातक की शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों के लिए इनका प्रशिक्षण का समय आरम्भ में एक वर्ष एवं एक वर्ष उपरान्त 2 वर्ष कर दिया जाना चाहिए। कोठरी आयोग ने कहा कि प्रत्येक राज्य में ''अध्यापक शिक्षा स्टेट बोर्ड'' की स्थापना की जाए। प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों के लिए 2 वर्षो की प्रशिक्षण अवधि व माध्यमिक विद्यालय के स्नातक

अध्यापकों का प्रशिक्षण समय कुछ वर्ष तक एक वर्ष का फिर दो वर्ष का कर दिया जाए। वस्तुतः स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त हमारे देश में शिक्षक–शिक्षा की द्रुतगति से प्रगति हुई। 1975 तक सम्पूर्ण भारत में सभी प्रकार के प्रशिक्षण विद्यालयों की संख्या लगभग 3000 हो गई थी।

अध्यापक शिक्षा पाठ्यक्रम निर्धारण के लिए कुछ सुझावः–

अध्यापक शिक्षा के औपचारिक स्वरूप में प्रत्येक स्तर के लिए उपयुक्त पाठ्यक्रम का होना अति आवश्यक है। ताकि निर्धारित उद्देश्यों की सम्प्राप्ति उसके माध्यम से कर पाना सम्भव हो सकें। पाठ्यक्रम के क्षेत्र में नित्यनवीन समावेश की आवश्यकता का किसी भी स्तर पर आज अस्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि नए प्रयोग और नवाचारिक प्रयत्नो के कारण निरन्तर ज्ञान के क्षेत्र में वृद्धि हो रही है। अध्यापक शिक्षा के पाठ्यक्रम में परिवर्तन विद्यालयीय शिक्षा से सम्बन्धित पाठ्यक्रमों में होने वाले परिवर्तनों के आधार पर भी किया जाना अपेक्षित हो जाता है ताकि भावी अध्यापक/अध्यापिकागण नवीनतम विद्यालीय पाठ्यक्रम के अनुसार शिक्षण कार्य करने में सक्षम हो सकें।

अध्यापकों की शिक्षा तथा प्रशिक्षण में गुणात्मक (Qualitative) सुधार से अभिप्राय है उनके वृत्तिक दृष्टिकोण योग्यता एवं कौशल में वृद्धि। आज अध्यापक शिक्षा के स्तर मान को सुधारने के कार्यक्रमों पर विशेष बल दिया जा रहा है। इस सम्बन्ध में प्रशिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रमों, प्रशिक्षण संस्थाओं में उपलब्ध सुविधाओं एवं उन संस्थाओं के अध्यापकों के वृतिक स्तर में सुधार को अधिक महत्वपूर्ण बताया गया है, साथ ही प्रशिक्षण विधियों में तदनुकूल संशोधन करने, शिक्षा–प्रशिक्षाथियों को वास्तविक परीस्थितियों के सम्पर्क में रखने तथा अध्यापन व्यवसाय को तकनीकी व्यवसाय की दृष्टि से विकसित करने पर विशेष बल दिया गया है। अध्यापक शिक्षा में गुणात्मक सुधार की दृष्टि से न्म्नि दो बिन्दुओं पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है–

1. अध्यापक शिक्षा का पुनर्गठन (Re-organization of Teacher Education) -

कोठरी शिक्षा आयोग ने गुणात्मक विकास के महत्व को इन शब्दो में दर्शाया है, ''अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम का सार इसकी गुणात्मक विशेषता है, इसके अभाव में अध्यापक शिक्षा न केवल वित्तीय दृष्टि से अपव्यय, वरन समय की दृष्टि से भी शिक्षा स्तर के पतन का साधन बन जाती है। ''अध्यापक शिक्षा में गुणात्मक वृत्ति के लिए आयोग ने प्रस्ताव किया कि–

1. प्रशिक्षण संस्थाओं में विषय सामग्री का पुननिर्धारण किया जाए।
2. सामान्य एवं वृतिक शिक्षा के संगठित पाठ्यक्रम, जिनकों पर्याप्त सफलता मिल चुकी है, का विकास किया जाये।
3. शिक्षक के कार्य में अनुपयोगी एवं असम्बन्धित सामग्री को हटाकर तथा उपयोगी एवं नवीन सामग्री सम्मिलित करके अध्यापकों की वृत्तिक शिक्षा को सजीवता प्रदान की जाए।
4. शिक्षण एवं मूल्याकंन विधियों में सुधार किया जाए।
5. छात्र शिक्षण की प्रणाली में सुधार किया जाए।
6. स्नातक एवं उत्तर स्नातक स्तर पर 'शिक्षा' पाठ्यक्रम के अतिरिक्त प्रधानाचार्यों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के लिए विशेष पाठ्यक्रमों का आयोजन किया जाए।

आयोग के ये सभी सुझाव महत्वपूर्ण हैं। अध्यापक का कार्य वाल मस्तिष्क का ही नहीं बाल–व्यक्तित्व का विकास करना भी है। अतः अध्यापक शिक्षा के सुधार का आधार ऐसे कार्यक्रमों को

बनाना है जो अध्यापक को मानवीय गुणों से सम्पन्न व्यक्ति बनाने में सफल हों। दूसरा विचार यह भी है कि अध्यापक–वृत्ति एक विशेषज्ञ का कार्य है, यह एक व्यवसाय मात्र नहीं है वरन् ऐसा कार्य है जिसमें उच्च स्तरीय ज्ञान, कौशल, शिक्षा जगत के बारे में गहन समझ बूझ एवं कार्य करने की प्रेरणा आवश्यक है। वर्तमान काल में विज्ञान एवं टेक्नोलॉजी के प्रयोग ने अध्यापक–शिक्षा को विशेषज्ञ का क्षेत्र बनाने में और अधिक सहायता दी है। इस कारण अध्यापक शिक्षा में सुधार कार्यक्रमों को अपनाते समय हमे इन दोनों ही विचारो को ध्यान में रखना होगा, साथ ही अध्यापक में मानवीय गुणों का विकास किया जाए एवं अध्यापका को विशेषज्ञ के रूप में प्रशिक्षित किया जाऐ। अध्यापक को विशेषज्ञ बनाने पर अधिक बल देना, अध्यापक के वृत्तिक स्तर के अन्य वृत्तियों जैसे– डॉक्टर, इन्जीनियर आदि के स्तर के समकक्ष बनाने के लिए आवश्यक हैं। एक आवश्यक सुझाव यह है कि जिन सिद्धान्तों एवं विधियों के बारे में प्रशिक्षणकर्ताओं को शिक्षा दी जाए उन सिद्धान्तों एवं विधियों का प्रशिक्षण ससंथाओं में स्वंय भी प्रयोग किया जाए। जैसेः सेमीनार, सिम्पोजियम, माईक्रो–टीचिंग, मैक्रो–टिचिंग, लघु समूह में परस्पर क्रिया, प्रयोग टिचिंग का उल्लेख किया जाता है फिर क्यों न यह विधियाँ स्वयं प्रशिक्षण संस्थाओं में अपनायी जाएँ। शिक्षण विधियों में अधिकांश विधियाँ मानव प्रयत्नों पर आक्षित है। उनकी प्रभावोत्पाकता मानव कौशल पर निर्भर करती है। परन्तु विज्ञान एवं तकनीकी के प्रभाव के कारण पश्चिम के उन्नतिशील देशों में ऐसी विधियों एवं साधनों का विकास हुआ है, जो मलूतः यान्त्रिक हैं। जैसे भाषा प्रयोगशाला, श्रव्य–दृश्य अभिलेखक, प्रोजेक्टर, टीचिंग मशीन, टेलीविजन, सिनेमा आदि। यह आवश्यक है कि वर्तमान काल में इन विधियों को अपनी शिक्षा व्यवस्था को सुधारने का आधार बनाएँ।

अध्यापक शिक्षा में सुधार लाने के लिए हमें छात्र शिक्षण व्यवस्था में भी आवश्यक सुधार करने होगें। इस सम्बन्ध में छात्रों द्वारा शिक्षण व्यवस्था के दोष और छात्रों के शिक्षण का पर्यवेक्षण। यह आवश्यक है कि शिक्षण अभ्यास के लिए भेजने से पूर्व छात्राध्यापक न केवल पाठ योजना बनाना सीख जाए वरन् उसे आदर्श पाठों एवं प्रायोगिक शिक्षण द्वारा शिक्षण प्रक्रिया का पूर्ण रूप से अभ्यास हो जाए। इसके अतिरिक्त शिक्षण के विभिन्न कौशलों का विकास करने के लिए भी उसे पर्याप्त सुविधाएँ एवं अवसर प्रदान किये जाये।

2. प्रशिक्षण संस्थाओं की दशा में सुधार (Improvement in the condition of Training Institutes) -

इस सम्बन्ध में सबसे आवश्यक कार्य यह है कि प्रशिक्षण संस्थाओं में कार्य करने वाले अध्यापकों की शैक्षिक योग्यता एवं वृत्तिक स्तर को ऊचाँ उठाया जाए। प्रशिक्षण स्कूलों के मुख्याध्यापक एवं सहअध्यापकों की शैक्षिक योग्यता के सम्बन्ध में प्राथमिक अध्यापक शिक्षा के राष्ट्रीय सर्वेक्षण में उल्लेख किया गया है कि मुख्याध्यापक की निम्नतम योग्यता बी० ए०, बी० एड०, निर्धारित है, परन्तु असम, केरल, मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र राज्य में इस स्तर से भी कम योग्यता वाले मुख्याध्यापक कार्य करते हैं। इसी प्रकार असम, कर्नाटक एवं उड़ीसा राज्य में अने अध्यापक स्नातक नहीं है। इसलिए सर्वप्रथम स्थान प्रशिक्षण संस्थाओं के अध्यापकों की शैक्षिक योग्यता में सुधार करने की ओर दिया जाए। प्रशिक्षण स्कूल के अध्यापक या तो एम० एड० उपाधि प्राप्त हों अथवा किसी स्कूल के विषय में एम० एड०, एम० एस० सी० तथा बी० एड० हों। नियुक्ति के समय पी० एच० डी० को प्राथमिकता दी जाए। नियुक्ति करते समय यह भी ध्यान रखा जाए कि विभिन्न विषय के विशेषज्ञों की सेवाएँ

उपलब्ध हो।

प्रशिक्षण स्तर ऊचाँ करने के लिए यह भी आवश्यक है कि प्रशिक्षण स्कूलों एवं कॉलेजों में केवल द्वितीय श्रेणी के उत्तीर्ण छात्रों को ही प्रवेश दिया जाए। मेधावी छात्रों के लिए प्रर्याप्त मात्रा में छात्रावृत्तियाँ हो। प्रशिक्षण संस्थाएँ कुशलता पूर्वक अपना कार्य कर सकें इसके लिए यह आवश्यक है कि उनमें साज सामग्री एवं साधनों की उचित व्यवस्था हो। इन संस्थानों नें पुस्तकलाओं, प्रयोगशालाओं, वर्कशाप, श्रव्य दृश्य सामग्री पर्याप्त मात्रा में हो। इसके अतिरिक्त, छात्रों एवं अध्यापकों के लिए छात्रावास निवास स्थान, खेलकूद, मनोरजंन एवं सामूहिक क्रियाओं का आयोजन करने की भी व्यवस्था होनी चाहिए।

अध्यापक शिक्षा का राष्ट्रिय पाठ्यक्रम (Nationl curriculum for Teacher Education) -

अध्यापक शिक्षा का राष्ट्रिय पाठ्यक्रम तैयार करते समय नवीन शिक्षा नीति प्रारम्भिक व माध्यमिक शिक्षा का राष्ट्रिय पाठ्यक्रम, मूल्यों का विकास, शैक्षिक तकनीकी व माध्यम, पूर्ववर्ती शैक्षिक अनुभव प्रेरणा व सामाजिक आर्थिक स्तर आदि की दृष्टि से छात्रों में विभिन्नताएँ व अध्यापकों की बदलती भूमिका को ध्यान में रखा गया है। यह पाठ्यक्रम निम्नलिखित सिद्धान्तों पर आधारित हैः–

1. अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम अध्यापकों को व्यवसायिक ज्ञान, मूल्यों व कोशलों को सघन रूप से प्रदान करने में समर्थ होना चाहिए तथा ये कार्यक्रम कार्यवाहक होने चाहिए।
2. पूर्व सेवा अध्यापक शिक्षा को आगमन व शुरूआत (Indution and Initiation) की प्रक्रिया माना जाना चाहिए।
3. अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम स्थानीय व क्षेत्रीय आवश्यकता को पूरा करने के लिए लोचनीय होने चाहिए।
4. कार्यक्रमों में संलग्न व्यक्तियों के एक स्तर से दूसरे स्तर तक क्षेतिज व उर्ध्वाधर गतिशीलता की व्यवस्था होनी चाहिए।
5. पाठ्यक्रम में सैद्धान्तिक ज्ञान को व्यवहारिक उपयोग से एकीकृत करने पर जोर होना चाहिएा।
6. कार्यक्रमों में व्यापक व सतत–मूल्यांकन की व्यवस्था होनी चाहिए।
7. कार्यक्रम को शोध प्रवृत्ति तथा प्रयोग नवाचारों को बढ़ाने वाला होना चाहिए।

अध्यापक शिक्षा के राष्ट्रिय पाठ्यक्रम में किसी भी स्तर के अध्यापकों के लिए पूर्व सेवा कार्यक्रम के कम से कम एक वर्ष के होने का सुझाव दिया गया है तथा कहा गया है कि स वर्षीय अध्यापक शिक्षा को पर्याप्त, दीर्घकालीन व दृढ़ सामान्य शिक्षा के उपरान्त होना चाहिए। पूर्व प्राथमिक शिक्षकों के लिए हाईस्कूल, प्राथमिक शिक्षकों के लिए इन्टरमीडिएट, माध्यमिक शिक्षकों के लिए स्नाकोत्तर शिक्षा के उपरान्त अध्यापक शिक्षा का एक वर्षीय पूर्व सेवा कार्यक्रम होना चाहिए।

शिक्षा एक व्यवसाय है, ऐसा व्यवसाय जो चोर बाजारी, भ्रष्टाचार आदि से परे स्वस्थ परम्पराओं का निर्माण कर राष्ट्र विकास के स्वप्न को पूरा करता है। आज की परिस्थितियाँ बदल गयी है। अध्यापक को राष्ट्र निर्माता मानने वालों को अपने मन में परिवर्तन करना होगा। शासन का पहला कर्तव्य यह हो जाता है कि वह शिक्षा का राष्ट्रिकरण करें। इससे बड़ा लाभ यह होगा कि समुदाय द्वारा उत्पन्न अनेक समस्याओं का अन्त हो जायेगा और समानता का भाव विकसित होगा। शिक्षा की घोषित राष्ट्रिया शिक्षा नीति में संशोधन कर उसे राष्ट्र के अनुकूल बनाया जायें तथा शिक्षा को दलगत

से परे जाये, क्योंकि वह तत्कालिक के बजाय भावी समाज का निर्माण करने में सफलता प्राप्त करेगी।

अध्यापन व्यवसाय को तकनीकी व्यवसाय की दृष्टि से विकसित किया जायें। अध्यापकों को वेतन तथा अन्य सुविधाओं में समानता दी जायें। सामाजिक प्रतिष्ठा के पदों एवं पुरस्कारों में उन्हें भी स्मरण किया जाए। यदि ऐसा नहीं किया जाता तो निसन्देह अनास्थाओं के मध्य जी रहे अध्यापक को एक बार फिर इन्कलाब का बिगुल बजाना पड़ेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. भटनागर सुरेश, कुमार संजय, भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास 2005 सूर्या पब्लिशिंग हाउस।
2. भटनागर डॉ० ए० बी०, भटनागर डॉ० (श्रीमति) मीनाक्षी, भटनागर डॉ० अनुराग, भारत में शैक्षिक प्रणाली का विकास, 2007, आर० लाल० बुक डिपो।
3. सक्सैना, एन० आर०, मिश्रा, बी० के०, मोहन्ती आर० के० अध्यापक शिक्षा आर० लाल० बुक डीपो, 2008।
4. Sharma, Dr. R. A. Development of Education, System in India, Surya Publication, 2004.
5. Shrma, Dr. R. A. Teacher Education, International Publishing House, Second 1999.
6. भट्टाचार्य, डॉ० जी० सी० अध्यापक शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
7. मदान, पूनम, भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास तथा समस्याएँ अग्रवाल पब्लिकेशन, 2013।
8. प्रवाह, मई–सितम्बर, 2015।